इतिहास में कारण-कार्य सम्बन्ध
[CAUSATION IN HISTORY

इतिहास में कोई भी घटना अकारण नहीं होती है और प्रत्येक कारण का कुछ प्रभाव भी होता हैं। प्रारम्भिक समय में इतिहासकार और विद्वान घटना के कारणों को महत्त्व नहीं देते थे क्योंकि वे उन्हें ईश्वर की इच्छा में हस्तक्षेप मानते थे परन्तु कारणों की अनिवार्यता को समझा गया है क्योंकि वे भविष्य के कार्यों के एक महत्त्वपूर्ण मार्गदर्शक स्वीकार कर लिये गये हैं।

प्रारम्भ में इतिहासकार केवल घटनाक्रम पर अपना ध्यान केन्द्रित रखते थे, जैसे युद्ध कब और कहाँ हुआ और उसमें कितने लोग मारे गये और सेनाओं की योजना किस प्रकार की थी। अब चूँकि इतिहासकार का दृष्टिकोण मूल्य आंकलन पर आधारित हो गया है अतः घटना के कारणों की ओर विद्वानों का ध्यान आकर्षित होने लगा है।

कारण की उत्पत्ति (Origin of Causes)—कारण शब्द की उत्पत्ति मूलतः लैटिन शब्द कौसा (CAUSA) से हुई है जिसका तात्पर्य दो घटनाओं के मध्य सम्बन्ध से है। **गस्टावसन** नामक इतिहासविद की धारणा है कि "कारण उन महत्त्वपूर्ण पहलुओं का एक भाग है जो यह सिद्ध करते हैं कि अमुक ऐतिहासिक घटना क्यों घटित हुई ? घटना का कारण साधारण अथवा जटिल कुछ भी हो सकता है। साधारण कारण को सरलतापूर्वक समझा जा सकता है जबकि जटिल कारण को जानने के लिए पूछताछ और धैर्य की आवश्यकता होती है। घटना का कारण तात्कालिक अथवा गुप्त दो प्रकार का होता है। दोनों ही कारण घटना के घटित होने में अपने दायित्व का निर्वाह करते हैं और एक-दूसरे से संलग्न होते हैं। उदाहरण के लिए भारत में 1857 ई. के विद्रोह का तात्कालिक कारण मेरठ की घटना थी जबकि उसके छिपे हुए कारणों में अंग्रेजों की भारतीयों के प्रति नीतियाँ थीं। घटनाओं की शृंखला में तात्कालिक कारण मुख्य कारण बन जाता है और उन्हें चरमोत्कर्ष के लिए प्रेरित करता है। **गौसचॉक** ने उचित ही लिखा है कि, इसकी तुलना माचिस की उस तीली से की जा सकती है जिसे ज्वलनशील पदार्थ के ढेर पर डाला गया हो, अथवा उस हथोड़े के प्रहार से जिसे विस्फोटक पर मारा गया हो।

यह सत्य है कि तात्कालिक कारण पर अधिक बल दिया जाता है और इतिहासकार का इस ओर विशेष ध्यान रहता है। वे तात्कालिक कारण से तो सहमत होते हैं किन्तु छिपे कारण से सहमत नहीं होते हैं परन्तु तात्कालिक कारण का अध्ययन मात्र ही घटना के प्रमुख कारण को जानने का पर्याप्त साक्ष्य नहीं है। इतिहासकारों को घटनाओं के छिपे हुए कारण की खोज करनी पड़ती है। **प्रोफेसर गुस्टैवसन** ने छिपे हुए कारण के सम्बन्ध में उचित ही लिखा है, "अत्यन्त दूर के कारण इतिहास में किसी विशेष स्थिति को स्थापित करते हैं और सम्पूर्ण ऐतिहासिक स्थिति

को सम्भव बनाते हैं।" उपर्युक्त वर्णन से यह स्पष्ट हो जाता है कि पेरिस की सन्धि द्वितीय महायुद्ध का मूल कारण थी। वस्तुतः प्रत्येक वस्तु किसी कार्य का फल होता है।

कारण की अवधारणा (Concept of Cause)—कारण के अवधारण के सम्बन्ध में भी इतिहासकारों में परस्पर मतान्तर हैं किन्तु उसके महत्त्व को स्वीकार करते हुए उन्होंने अलग-अलग विचार व्यक्त किये हैं। अरस्तू ने लिखा है कि कारणों के अभाव में किसी घटना अथवा कार्य का होना सम्भव नहीं है। **कालिंगवुड** की मान्यता है कि कारण की अवधारणाओं को सभी विद्वानों ने अठारहवीं शताब्दी में व्यक्त किया है। इसी प्रकार **रेनियर** का मत है कि, किसी भी घटना के एक नहीं अपितु अनेक कारण होते हैं। इसी प्रकार **ई. एच. कार** का मानना है, "अतीत की घटनाओं को क्रमबद्धता प्रदान करना और कारण व परिणाम के परस्पर सम्बन्ध को क्रमानुसार वर्णित करना ही इतिहास है।"

यद्यपि **कालिंगवुड** का यह मानना है कि 'इतिहास अतीत के मानवीय कार्यों का अध्ययन है' परन्तु इससे सब विद्वान सहमत नहीं हैं क्योंकि अनेक घटनाओं में मानवीय प्रक्रिया के स्थान पर प्राकृतिक कारण प्रधान होते हैं। मुहम्मद तुगलक की कर वृद्धि की योजना की असफलता में अकाल की मुख्य भूमिका रही। शेरशाह द्वारा हुमायूँ को पराजित किये जाने में बाढ़ का योगदान रहा और रूस में नेपोलियन की पराजय का प्रमुख कारण भी अत्यधिक सर्दी था।

डेविड थॉमसन ने कारणों एवं उसके प्रभाव पर विशेष बल दिया है परन्तु **बेरकलाफ** इस तथ्य के विरोध में लिखते हैं कि, प्रभावों की अपेक्षा कारणों का अधिक महत्त्व होता है क्योंकि कारणों के अभाव में परिणाम की कोई सम्भावना नहीं होती। इसी प्रकार इतिहासकार **वाल्श** ने कारणों के महत्त्व पर विशेष बल दिया और उनकी क्रमबद्धता पर भी बल दिया है। उनके मत का समर्थन करते हुए **टेने** ने भी लिखा है कि, इतिहासकार एक बुनकर होता है जो बिखरे हुए सूत्रों को सूक्ष्म दृष्टि से एकत्रित करके उन्हें कपड़े के रूप में प्रस्तुत करता है।

कार्य-कारण सम्बन्ध (Theory of Causation)

इतिहास में कार्य-कारण का अत्यधिक सम्बन्ध है। कारण के अभाव में किसी घटना का होना कदाचित सम्भव नहीं है। विभिन्न विद्वानों ने इस सन्दर्भ में अपने मत व्यक्त किये परन्तु इस तथ्य को सभी ने एक मत से स्वीकार किया है कि किसी भी कार्य में कारणों का होना आवश्यक है। अतः किसी भी घटित घटना के सम्बन्ध को स्पष्ट करने के लिए कार्य-कारण सम्बन्धों की विवेचना आवश्यक है।

इतिहासकार का कारण से और तथ्य से अत्यन्त निकट सम्बन्ध होता है और इतिहासकार अपनी व्याख्या के अनुसार कारणों को क्रमबद्धता प्रदान करता है। ऐतिहासिक दृष्टि से भी तथ्यों में कारणों की चयन प्रक्रिया ही इतिहास है। आधुनिक वैज्ञानिक इतिहासकारों के अनुसार, कारणों की व्याख्या में कल्पना की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका होनी चाहिए। **क्रोचे** एवं **कालिंगवुड** दोनों का मानना है कि कल्पना ऐतिहासिक ज्ञान का मूल स्रोत है।

प्रसिद्ध लेखक **मैडलवाम** के अनुसार, "सार्वभौम नियम के अनुसार प्रत्येक घटना के कुछ कारण अवश्य होते हैं" जो विशिष्ट परिस्थितियों की देन होते हैं। **ऐडवर्ड मेयर** ने लिखा है कि, इतिहासकार को अपने लेखन में सावधानीपूर्वक घटनाओं को प्रभावित करने वाले कारणों की व्याख्या करनी चाहिए। व्याख्या का उद्देश्यपरक व मूल्यपरक होना भी आवश्यक है। **मानेके** का मत है कि, "इतिहास में कार्य-कारण सम्बन्धों की गवेषणा मूल्यों के सन्दर्भ के बिना सम्भव नहीं है।" इसी प्रकार **वाल्श, गिबन और कार्ल मार्क्स** ने भी मूल्यपरक व्याख्या पर बल दिया

है। एक विद्वान का यह भी मत है, चूँकि "कारणों की क्रमबद्धता में इतिहासकार विभिन्न मूल्यों को अपनी व्यक्तिगत रुचि के अनुसार प्रधानता प्रदान करता है और घटना के सभी पक्षों का सूक्ष्म अध्ययन करके निष्कर्ष निकालता है। अतः उसके निष्कर्ष में व्यक्तिगत दृष्टिकोण के प्रभाव का होना भी स्वाभाविक है।

कारण व परिस्थिति के सम्बन्ध में **मैडलवाम** का मत है कि "घटना उसे कहते हैं जिसके फलस्वरूप सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक परिवर्तन होते हैं।" उनकी यह भी मान्यता है कि मुख्य घटना को कारण तथा अन्य को परिस्थिति की संज्ञा दी जाती है। जैसे प्रथम विश्वयुद्ध में राजकुमार फर्डीनिण्ड की हत्या के अतिरिक्त और कारणों का भी योगदान था। इसी प्रकार राष्ट्र संघ की असफलता में अमरीका का सदस्य न होने के साथ-साथ उसकी विभिन्न दुर्बलताओं ने महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की थी। इसीलिए **ओकशाट** ने लिखा है, "परिस्थितियों की व्याख्या में ही कारण के स्पष्ट प्रभाव को ढूँढ़ा जा सकता है।" कालिंगवुड ने कारण और परिस्थितियों में अन्तर करने पर बल दिया है और **वाल्श** ने लिखा है, "सभी कारणों से ऊपर कोई अन्तिम कारण नहीं होता अपितु सब कुछ परिस्थितियों पर निर्भर करता है।"

कारण व परिणाम एक-दूसरे के पूरक हैं। कारणों में अन्तर होने पर परिणाम में अन्तर का होना भी स्वाभाविक है। जिस प्रकार अत्यधिक शीत का परिणाम हिमपात होता है, उसी तरह मानसून के कारण अत्यधिक वर्षा होती है। **प्रो. कार** की भी मान्यता है कि, अतीत की घटनाएँ कतिपय कारणों का प्रतिफल होती हैं। **विलियम जेम्स** ने भी लिखा है कि, "इतिहासकार निष्कर्ष प्राप्त करने के लिए कारण और परिणाम की खोज करता है।"

कारण एवं अवश्यम्भाविता के सम्बन्ध में भी इतिहासकार एक मत नहीं हैं। भाग्यवादी और धार्मिक अवधारणा में विश्वास करने वाले **मैडलवाम, विजेरी, एडम स्मिथ, प्रो. कार, हीगल** और **कार्ल मार्क्स** आदि विद्वान हैं परन्तु 20वीं शताब्दी के लेखकों ने इसकी कटु आलोचना की है। उनेक अनुसार, 'अवश्यम्भावी' शब्द के स्थान पर 'सम्भावित' शब्द का प्रयोग किया जाना चाहिए। वस्तुतः घटना के जटिल हो जाने के पश्चात् ही 'अवश्यम्भावी' शब्द का प्रयोग किया जा सकता है।

इतिहास का एक उद्देश्य अतीत को भविष्य की धरोहर बनाना भी है। वर्तमान दोनों के मध्य की काल्पनिक विभाजन रेखा कही जा सकती है। इसलिए हुईजिंगा ने इतिहासकार को सदैव उद्देश्यवादी होने पर बल दिया है। **प्रो. कार** ने भी इसके समर्थन में लिखा है, "इतिहासकार की आस्थाओं में भविष्य समाहित रहता है।" इसी प्रकार डेवी की मान्यता है कि अतीत के अध्ययन का कारण वर्तमान सुखी और वैभवपूर्ण बनाना है। उसमें भविष्य को सुखद बनाने की कल्पना भी जुड़ी रहती है। वस्तुतः इतिहासकार कारणों की व्याख्या के समय अतीत, वर्तमान और भविष्य के प्रति समान दृष्टिकोण रखता है और उसके द्वारा दी गई व्याख्या में निहित भविष्य कार्य-कारण व्याख्या की सर्वोत्तम परिकल्पना है जिसके आधार पर इतिहासकार कारणों को क्रमबद्ध करते हुए निष्कर्ष प्रस्तुत करता है।

कार्य-कारण के सिद्धान्त (Theory of Causation)—कार्य-कारण के अनेक सिद्धान्त हैं और प्रत्येक सिद्धान्त तर्कसंगत प्रतीत होते हैं। इनमें निम्नलिखित सिद्धान्तों पर प्रकाश डालना यहाँ समीचीन होगा।

दैविक योजना (Divine Theory)—इस सिद्धान्त के समर्थकों का विश्वास है कि इतिहास में भाग्य की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। समस्त प्राचीन सभ्यताएँ जैसे इज्पिशियन,

बेवीलोनियन और ग्रीक का इस सिद्धान्त में विश्वास है। प्रत्येक धर्म चाहे वह हिन्दू, इस्लाम, ईसाई और चीनी सभी ने इस सिद्धान्त का समर्थन किया है। इन सब धर्मों के मानने वालों का विश्वास है कि सभी राजा, नायक, पादरी और समाज के बुद्धिवादी कई घटनाओं में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं लेकिन ऐसी ही बहुत-सी घटनाएँ होती हैं जो ईश्वर की इच्छा से घटित होती हैं। इस प्रकार वे भगवान का मानव के कार्यों में प्रत्यक्ष हस्तक्षेप स्वीकार करते हैं। ये इतिहासकार यह मानते हैं कि प्रत्येक घटना का कोई कारण होता है और वे अपने ढंग से उस कारण का वर्णन करते हैं और जहाँ वे घटना से सम्बन्धित कोई कारण नहीं ढूँढ़ पाते हैं, वे उसे ईश्वरीय घटना मान लेते हैं।

प्रारम्भिक समय में अधिकांश विद्वानों ने इस सिद्धान्त को स्वीकार कर लिया था चूँकि समाज पुरोहित वर्ग के द्वारा शासित होता था। पूर्व और पश्चिम में यह सिद्धान्त अधिक मान्य व लोकप्रिय था जिसका प्रमुख कारण धर्म में विश्वास था। विद्वान ईश्वरीय शक्ति में अंधविश्वास रखते थे और चर्च का उनके सामाजिक जीवन पर नियन्त्रण था। साथ ही अशिक्षा और अज्ञान के कारण इस सिद्धान्त को महत्त्व प्राप्त हुआ था, परन्तु वर्तमान समय में यह विश्वास किया जाता है कि प्रत्येक घटना का कोई कारण होता है और उसके घटित होने में व्यक्ति की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है।

बुद्धिवादी सिद्धान्त (Intellectual Theory)—17वीं और 18वीं शताब्दी में लोगों में जागृति आने लगी थी और इस काल में समाज में बुद्धिवाद का उत्थान हुआ। अनेक विद्वानों, इतिहासकारों और चिन्तकों ने घटनाओं के घटित होने में दैविक योजना का बहिष्कार किया। उन्होंने मानव के विकास में ईश्वर के संलग्न होने में असहमति प्रकट की। उन्होंने मानव की ओर अपना ध्यान आकर्षित किया तथा उसकी भूमिका पर विशेष बल दिया। इतिहासकारों ने घटनाओं के वर्णन में बुद्धिवादी तरीके को अपनाना प्रारम्भ किया। **लॉक** का मत है कि व्यक्तियों में परस्पर प्रेम, राष्ट्रीय समाज की प्रभावोत्मक विशेषता थी और उसकी नागरिक संस्था तर्क एवं उनकी स्वतन्त्रता, अधिकारों और विशेषाधिकारों को सुरक्षित रखने की इच्छा से प्रेरित थीं। फ्रांसीसी दार्शनिकों की भी मान्यता थी कि इतिहास स्थिर ज्ञान की प्राप्ति और तर्क की विजय के माध्यम से मानव मात्र सम्पूर्णता की ओर बढ़ रहा है।

राष्ट्रीय सिद्धान्त (National Theory)—19वीं शताब्दी के प्रारम्भ के साथ-साथ कारण से सम्बन्धित एक अन्य समस्या को स्वीकार किया। वह राष्ट्रवाद की भावना थी जिसने 19वीं शताब्दी में ठोस आधार ग्रहण कर लिया था। राष्ट्रवाद की भावना के कारण अनेक लड़ाइयाँ व युद्ध हुए ताकि शक्तिशाली राष्ट्र दुर्बल राष्ट्रों पर अपना आधिपत्य स्थापित कर सकें। निःसन्देह अतीत काल में भी राष्ट्रों के मध्य राष्ट्रवाद की भावना विराजमान थी जो निरन्तर अपनी सीमाओं के विस्तार हेतु संघर्ष किया करते थे। इनके अतिरिक्त राष्ट्रीय चरित्र एवं संस्था ने भी ऐतिहासिक घटनाओं के घटित होने में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की। वस्तुतः ऐतिहासिक रूप से स्थापित सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक संस्थाओं के द्वारा ही राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण एवं विनाश हुआ।